पंडिता रमाबाई सरस्वती

पटरी से उतरी हुई औरतों का यूटोपिया

राष्ट्रवाद का प्रति-आख्यान

अभय कुमार दुबे
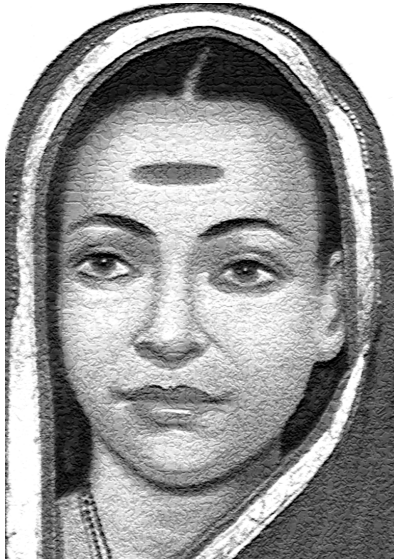
सावित्रीबाई फुले

अब तो उजाड़ ही उजाड़ था! पुरानी तवायफ़ों के बरक्स कई गरीब, दलित औरतें भी कैंटोनमेंट क्षेत्रों में पार्ट-टाइम या फुलटाइम धंधा करने को मजबूर थीं! उस पूरी पट्टी की भाषा और भाव-भंगिमा ही बदलने लगी थी, क्योंकि वहाँ कुछ भी स्थायी नहीं था, सब उठल्लू था— एक चलताऊ-सी, उखड़ी-बिखरी, नीरस-खुरदुरी भाषा विकास पा रही थी। जो सरस बोली-बानी की परम्परा थी, हास-परिहास, गुफ़्तगू और लंतरानियों की चटक, सुर्ख़, चरपरी भाषा : हिंदी-उर्दू— दोनों ही लहरियों से लहालोट, उसके पीछे जाति-मण्डल वाले लाठी लेकर पड़े थे। आर्यसमाज, मारवाड़ी समाज, खत्री हितकारी सभा, जैन गजट, मैथिलीशरण गुप्त और रामनरेश त्रिपाठी तक स्त्री-भाषा की मुक्त लहरियों और गारी-गायन को लेकर इतने चिंतित थे ... ... बड़े मज़ाकिया ढंग से 'भारत-भारती' की ये पंक्तियाँ पढ़ीं काननबाला ने और देर तक हँसती रही!

> *रखती यही गुण वे कि गंदे गीत गाना जानतीं*
> *कुल-शील-लज्जा उस समय कुछ भी नहीं वे मानतीं,*
> *हँसते हुए हम भी अहो! वे गीत सुनते सब कहीं*
> *रोदन करो हे भाइयो, ये बात हँसने की नहीं।*[1]

ताराबाई शिंदे

---

[1] अनामिका (2008 क), *दस द्वारे का पींजरा,* राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली : 265.